P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* (Part-1) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारतीय लोकगीत परम्परा

सारांश

हजारों वर्षों से जनसामान्य के बीच प्रचलित गीत लोक गीत कहलाते हैं। इनमें समय तथा स्थान का परिवर्तन होने से परिवर्तन होता रहता है। प्रायः देखा गया है कि एक बोली का लोकगीत दूसरी बोली में भी बोलीगत परिवर्तन के साथ गाया जाता है। इसी प्रकार जो लोकगीत हजारों वर्ष पूर्व प्रचलित थे वे आज भी गाये जाते हैं। बस समय के साथ परिवर्तन आता रहता है। लोकगीत जब लिपिबद्ध कर दिये जाते हैं तो लोक–साहित्य का अंग बन जाते हैं। व्यक्ति विशेष इनका रचयिता नहीं होता है बल्कि कहना चाहिए कि लोक ही इनका उन्नायक होता है। भारतीय लोक परम्परा में लोकगीतों का अनुशीलन इस शोधपत्र का ध्येय है।

मुख्य शब्द : लोक संस्कृति – समाज के संस्कार, लोकगीत – समाज में प्रचलित अलिखित गीत, गाथिन – गीत गाने वाले, देव विषयक – देवताओं के हेतु, गाथा – लोक प्रचलित मौखिक कथाएं।

संजय कुमार पाण्डेय
रिसर्च स्कालर,
एस०एस०(पीजी) कॉलेज,
शाहजहाँपुर, उ०प्र०

श्रीकान्त मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिन्दी परास्नातक विभाग,
एस०एस०(पीजी) कॉलेज
शाहजहाँपुर, उ०प्र०

प्रस्तावना

लोक संस्कृति का संवाहक लोकगीत होते हैं। प्राचीन काल से ही लोकगीत परम्परा विद्यमान रही। लोकगीतों ने जहाँ समाज का अनुरंजन किया वहीं संस्कृति को जीवित भी रखा। भारतीय जनमानस में लोकगीतों के विविध रूप देखने को मिलते हैं जैसे संस्कारगीत अथवा सामूहिक कार्य करते समय सहगान बहुत ही लोकप्रिय रहा।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रभाती, लोरी, गीत–प्रगीत और लोकगीत मानव के सबसे पुराने सहचर हैं। इन सहचरों ने मानव के साथ एक दीर्घकालीन यात्रा की और यह यात्रा आज भी चल रही है। भारतीय लोकगीत परम्परा का अध्ययन इस शोध पत्र का उद्देश्य है।

सम्पूर्ण संसार में मनुष्य के आविर्भाव से लोकगीतों का उद्भव माना जाता है। लोकगीतों के जन्म की कोई काल रेखा नहीं है बल्कि मौलिक परंपरा के अविच्छिन्न प्रवाह के रूप में ये निरन्तर असीम अतीत के गर्भ में छिपे उद्गम श्रोत की ओर इशारा करते हैं। लोकगीतों की अनन्त प्रवाहमयी परम्परा की प्राचीनता के सम्बन्ध में पं0 राम नरेश त्रिपाठी ने लिखा है ''जब से पृथ्वी पर मनुष्य है, तब से गीत भी है। जब तक मनुष्य रहेंगे तब तक गीत भी रहेंगे। गीतों का भी जीवन–मरण मनुष्यों की तरह चलता है। कई गीत हमेशा के लिए लुप्त हो गए। कुछ गीतो की आयु हजारों वर्ष की होती है। वे थोड़े फेर–फार के साथ समाज में अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं।[1]

भारत वर्ष में लोकगीतों की विकास परम्परा बहुत प्राचीन है। वैदिक ग्रन्थों में लोकगीतों का पहला चरण चिन्ह उपलब्ध होता है। पुत्र–जन्म, यज्ञोपवीत तथा विवाहादि उत्सवों पर सरस गीत गाए जाने का उल्लेख उनमें मिलता है। वेद में इन गीतों के लिए गाथा शब्द का प्रयोग हुआ है।[2] गीतों की गाने वाले अर्थ में 'गाथिन' शब्द प्रयुक्त है।[3]

विवाहादि अवसरो पर गाए जाने वाले गीत 'रैमी' 'नाराशंसी' तथा 'गाथा' तीनों संज्ञाओं से अभिहित किए जाते थे लेकिन 'गाथा' शब्द विशिष्ट अर्थ 'रैमी' और 'नाराशंसी से प्रथक निर्दिष्ट किया गया है। ब्राह्मण ग्रंथों में भी गाथाओं का विशेष उल्लेख होता है। ब्राह्मण ग्रंथों में ऋक् तथा गाथा के अन्तर को स्पष्ट किया गया है। ऋक् एक देवी तथा गाथा मनुषा होती थी। गाथाओं का प्रयोग यत्र के रूप में नहीं बल्कि वे ऋक,यजु तथा साम से पृथक् होती थी। प्राचीनकाल में एक राजा के उदात्त एवं महान चरित्र को लक्षित करके जो गीत समाज में प्रचलित हो जाते थे और जन समुदाय द्वारा गाए जाते थे वे ही गाथा संज्ञा से अभिहित किए गए थे। यास्क के निरूपण की व्याख्या करते हुए

दुर्गाचार्य ने कहा है कि वैदिक सूक्तों में कहीं–कहीं जो इतिहास उपलब्ध होता है वह कहीं ऋचाओं के द्वारा कहीं गाथाओं के निबद्ध है।[4]

वैदिक गाथाओं के उदाहरण शतपथ ब्राह्मण, तथा ऐतरेय ब्राह्मण में मिलते हैं। इनमें अश्वमेघ यज्ञ करने वाले श्रेष्ठ राजाओं के चरित्र के बारे बताया है। ऐतेरेय ब्राह्मण में इन गाथाओं कोक श्लोक, यज्ञगाथा तथा गाथा में कहा गया है।[5]

महाभारत काल में पूर्ण रूप से ऐतिहासिक गाथाओं की परम्परा प्रचलित थी। महाभारत में दुष्यन्त पुत्र भरत के सम्बन्ध में अनेक गाथाएं उपलब्ध होती है। ऐतरेय ब्राह्मण में वर्णित गाथाएं श्रीमद भागवत् के सप्तम स्कन्ध में प्राप्त होती है। गाथाओं का गायन विशेष रूप से राजसूर्य यज्ञ के अवसर पर होता था। परन्तु मैत्रायणी संहिता में विवाह के शुभ अवसर पर पर गाथाओं के गायन का प्रमाण प्राप्त होता हैं।[6] विवाह सम्बन्धी गाथाएं 'पारस्कर गृह्मसूत्र' में प्राप्त होती है।[7] सीमांतोन्नयन के अवसर पर गाथा गाने का वर्णन आश्वासन गृह्मसूत्र में मिलता है।[8]

इस तरीके से गीतों के विकास की परम्परा में लोकगीत का सर्वप्रथम ऐतिहासिक रूप गाथा ही था। वैदिककाल में गाथाओं के मुख्य दो रूप लक्षित हैं–

(1) ऐतिहासिक (2) देव विषयक

ऐतिहासिक

राजसूय यज्ञादि के अवसर पर गाई जाने वाली गाथाएं।

देव विषयक

विभिन्न संस्कारों के अवसर पर मंगल हेतु पालि जातकों में निबद्ध गाथाएं अत्यन्त प्राचीन हैं, जिनमें तत्कालीन लौकिक कहानियों एवं संक्षिप्त अल्लेख मिलता है। भगवान बुद्ध से सम्बन्धित कथाएं जो जातक कहलाती हैं वे गाथाओं के माध्यम से ही अभिव्यक्त हुईं। पालि के प्रसिद्ध सिंहचर्म में सिंह की खाल ओढ़ कर खेतों में धान जौ खाने वाले गधे की कथा है। किसान के रूप गौतम बुद्ध, गधे की आवाज पहचान कर इस रहस्य का उद्घाटन करते हुए प्रथम गाथा कहते हैं यही पर द्वितीय गाथा गधे के स्वामी–एक बनियां–के द्वारा कहीं गई है।[9] लोकगीतों का प्रबल विकास प्राकृत काल में लक्षित है। हाल की 'गाथा सप्तशती' में संगृहीत सात सौ गाथाएं उसका प्रमाण हैं।

वैदिक युग के पश्चात् महाकाव्य एवं पौरणिक युग में भी लोकगीतों की विकास परम्परा दिखाई देती है। बाल्मीकि रामायण में राम जन्म के शुभ अवसर पर गन्धर्वों द्वारा गायन एवं अप्सराओं द्वारा नृत्य करने का उल्लेख किया है।[10] इसी तरह से वेदव्यास जी कृत श्रीमद् भागवत में प्राप्त होता है। वहां कृष्ण जन्म के अवसर पर स्त्रियों द्वारा मिल कर गाए जाने वाले गीतों का उल्लेख किया गया है।[11] महाकवि कालिदास ने आज के जन्मोत्सव के अवसर पर राजा दिलीप के राजमहल में वेश्याओ द्वारा नृत्य एवं गायन वाध प्रस्तुत करने का वर्णन किया है। संस्कृत की प्रसिद्ध कवियित्री 'विज्जिका' ने धान कुटने वाली स्त्रियों के द्वारा गाए जाने वाले गीतों का बहुत ही सरल रूप में वर्णन किया है। स्त्रिया धान कूटती जाती है और साथ ही साथ गीत भी गाती हैं। जब वे मूसल उठाती तथा गिराती हैं तब उनकी चड़ियों की झंकार उठती है श्रम करने के कारण उनका अंग–अंग गतिशील हो उठता है। गीतों के स्वर चूड़ियों की झंकार से मिलकर अनुपम आनन्द दिखाते हैं।[12] इसी तरीके से महाकवि श्री हर्ष ने चक्की चलाती स्त्रियों के बारे में बताया है। स्त्रियां सत्तू पीस रही हैं जिसकी खुशबू राह गीरों का आकृष्ट करती है।[13] चक्की चलाते समय स्त्रियां गीत गाती हैं।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने रामचरितमानस में अनेक अवसरों पर स्त्रियों द्वारा मंगल गीत का उल्लेख किया है। राम जन्म, सीता का गौरी पूजन, सीता स्वयंवर, सीता राम विवाह आदि सभी अवसरों पर स्त्रियां मधुर गीत गाती हैं। लोकगीतों की व्यापक महत्ता का प्रदर्शन तुलसीदास जी ने अपनी कृति मे किया है। इनके काव्य में कोई भी पावन क्षण गीतों की सुधा–धारा से आप्लावित हुए बिना नहीं रहा। राम–विवाह के अवसर पर बारात के भोजन के समय स्त्रियों द्वारा जेवनार तथा गाली गाने का भी वर्णन किया है। तुलसीदास जी ने अपने काव्य में लोकरीतियों का वास्तविक वर्णन किया है। सोहर छन्द में उन्होंने 'रामलला नहछू पुस्तक की रचना की है।[14] जानकी मंगल एवं 'पार्वती मंगल' में सभी वैवाहिक रीतियों एवं विधियों सहित क्रमशः राम–सीता एवं शिव पार्वती के विवाह का वर्णन है। इनमें रीति के अनुसार गाये जाने वाले गीतों का वर्णन है।[15] राजस्थान में एक लोक गीतात्मक काव्य है जिसे 'मारूरा दूहा' कहते है। आल्ह खण्ड भी लोक–गीत की प्रवृत्ति का प्रतीक है। मौलिक रूप उसका अलग होता है परन्तु लोक कण्ठ से निःसृत होकर वह लोकगीत की परम्परा में आ जाता है।

प्रचलित लोकगीत की परम्परा आधुनिक काल की काव्य चेतना में, स्वतः अंकित हो उठती है।[16] लोक जीवन के प्रति मानव मन की आस्था के परिणामस्वरूप अनेक अन्तर्भूत तथ्यों का उद्घाटन हो रहा है।

लोकगीतों की प्रवत्तियां कतिपय सार्वभौम होती हैं। डॉक्टर यदुनाथ सरकार के अनुसार प्रबन्ध की दुत गति, शब्द विन्यास की सादगी विश्व जनीन मर्मस्पर्शी और आदिम मनोवेग सूक्ष्म किन्तु प्रभावोत्पादक, चरित्र–चित्रण, क्रीड़ा स्थली अथवा देश काल का स्थूल अकंन, साहित्यिक कृत्रिमताओं का न्यूनातिन्यून प्रयोग या सर्वथा बहिष्कार–सच्चे लोकगीत की ये नितान्त आवश्यक विशेषताएं है।[17] जार्ज सैंपसन के मतानुसार लोकगीतों में स्वर और शब्दों का ऐसा गत्यात्मक संयमन होता है जो गीत का छन्दोबद्ध करके नृत्य के ताल और लय के अनुकूल बना देता है।[18]

फ्रेच विद्वान मोशिए आपरे ने सन् 1853–54 में लोकगीतों के सामान्य लक्षणों पर लोकगीत संग्रहकों के समक्ष विचार व्यक्त करते हुये लोकगीतों के निम्नांकित प्रमुख लक्षणों का उल्लेख किया था–

1. अत्यानुप्रास के स्थान पर ध्वनि साम्य का प्रयोग।
2. पुनरूत्ति (कथनोपकथन में)
3. तीन, पॉच, सात आदि संख्याओं का बार–बार प्रयोग।
4. दैनिक व्यवहार की वस्तुओं को सोने रूपे को कहना।

भारतीय लोकगीतों में साधारणतः प्राप्त होने वाली विशेषताओं को निम्नांकित रूप से प्रस्तुत कर सकते हैं–

लोकगीतों की रचना समूहिक रूप से होती है। कोई एक व्यक्ति इसकी रचना नहीं करता इसलिए उसमें वैयक्तिक भावना का अभाव रहता है। लोकगीतों के रचनाकारों में आत्म प्रचार की प्रवत्ति नहीं होती है। वे अपने गीतों में निजी जीवन को कहीं भी आरोपित नहीं करते। इसलिए किसी गीत के रचयिता तथा रचना काल को जानना असम्भव है। लोकगीत जातीय सृष्टि है जिसमें अनेक व्यक्तियों का सहयोग रहता है। लोक कवि की अपनी रचनाओं में नामोल्लेख न करने के कारणों पर विचार करते हुए राबर्ट ग्रेंक्स ने लिखा है। कि वर्तमान सामाजिक संगठन में किसी लेखक का अपनी कृति में नाम न देने का अभिप्राय अपनी रचना के प्रति लज्जा भाव या नामाभिव्यक्ति में किसी प्रकार की भय–आशंका हो सकती है। किन्तु व आदिम समाज में यह बात लेखक के नाम की असावधानी के कारण होती थी। सामूहिक तथा जातीय रचनाओं में समूह का महत्व होता है किसी व्यक्ति विशेष का नहीं। जैसे छोटे– छोटे बच्चे गीत बनाते, गुनगुनाते जाते हैं लेकिन इनमें से कोई भी बालक गीत का रचियता होने का दावा नहीं करता और न ही यह याद रख ता है कि गीत में कौन सी कड़ी कौन से बालक ने जोड़ी है। उसी तरह से जातीय रचना में व्यक्ति–विशेष की महत्ता नहीं होती रचमिता का प्रेम समूह थे प्राप्त होता है। इस समूह के मध्य असंख्य स्त्री पुरूषों के प्रयासों में गातों का जीवन प्राण पाता रहता है। जिनकी वाणी में दिमाग नहीं दिल होता है। जिनके विनय के परदे में छल नहीं होता पश्चाताप होता है–जिनकी मित्रता के फूल में स्वार्थ का कीड़ा नहीं होता बल्कि प्रेम की गरिमा है, जिनके मनुष्य जगत में आनन्द, सुख–शान्ति है। प्रेम, करूणा, त्याग क्षमा और विश्वास है उन्हीं ग्रामीण मानवों के बीच में हृदय नामक आसन पर बैठ प्रकृति गान करती है। प्रकृति के वे ही गीत ग्राम गीत है। वेदों की तरह वे भी अपौरूषेय हैं।[19]

लोकगीतों का अस्तित्व असंख्य कण्ठों पर मौखिक परम्परा के रूप में विद्यमान है। आदिकाल से ही वेदों की अध्ययन परम्परा मौखिक ही थी। शिष्य 'श्रुति' रूप में गुरू से ज्ञान पाता था। श्रुति को लिपि का आधार कान्तर में मिला। लोकगीत हजारों कण्हों से धूमते हुए परम्परा के अमर प्रवाह को अक्षुण्ण बनाए हैं। प्रसिद्ध विद्वान सिजविक का कथन है कि लोक साहित्य को लिपि बद्ध करना उसकी हत्या में सहायता देना है। जब तक वह मौखिक रूप में है, तभी उसमें जीवनी शक्ति है।[20] प्रोफेसर गूमन ने मौखिक परम्परा को लोकगीतों और लोकगाथाओं की वास्तविक कसौटी कहा है।[21] मौखिक परम्परा में लोकगीतों का प्राण–तत्व अमृत–सिंचित होकर प्रगति का संचार पाता है।

लोकगीतों की आत्मा लय होती है। ग्रामीण लोगों के हृदय से निकलकर सीधे–सीधे शब्दों का संस्पर्श जब इस तत्व से होता है तो 9वे आसीम सौन्दर्य से युक्त होकर आनन्द की सृष्टि करते हैं। रूखे और निरर्थक शब्द भी मधुर कण्ठ–स्वर की लहरों पर तैरते हुए विलक्षण सरसता को प्राप्त करते हैं। लय दो तरह की होती है (1) द्रुत (2) विलम्बित। जल्दबाजी में गाये जाने वाले गीतों में द्रुत लय तथा धीमी गति से गाए जाने वाले गीतों में विलम्बित लय होती है। ग्रामीणों के गीतों में लय की अद्‌भुत क्षमता होती है।

लोकगीतों के गायन में किसी पंक्ति विशेष को दुबारा गाने की एक महत्वपूर्ण क्रिया है।[22] साधारणतः गाने की पहली या दूसरी लाइन की आवृत्ति की जाती है। हर एक गीत में एक टेक पद होता है। गायक उन टेक पदों की पुनरावृत्ति करके श्रोताओं के मन में विशेष प्रभाव उत्पन्न करते हैं। पंक्तियों की पुनरावृत्ति से गाने में संगीत की सुन्दरता और बढ़ जाती है।

लोकगीतों में लय और तुक के लिए गायक अलग–अलग तरीकों से निरर्थक शब्द का प्रयोग करता है। जैसे कविता में तुकबंदी होती है, उसी तरह से लोकगीतों की रचना नहीं होती। गीत की प्रत्येक कड़ी किसी प्रकार की नियमबद्धता से स्वतन्त्र होती है। इस स्थित में संगीत की रक्षा के लिए निरर्थक शब्दों द्वारा पंक्तियों में सामजस्य उत्पन्न किया जाता है।[23]

लोकगीतों में मन के भावों की अभिव्यक्ति कथनोपकथन के रूप में भी होती है।[24] गीत की प्रथम पंक्ति में प्रश्न तथा उत्तर द्वितीय पंक्ति में होता है। इस प्रकार से गीत में जिज्ञासा की उत्कंठा उत्पन्न होती है, जो सुनने वालें के लिए आनन्दकारी सिद्ध होता है।

लोकगीतों में संख्याओं के प्रयोग की प्रवृत्ति होती है। सामान्यतः तीन, पाँच, सात, नौ, बत्तीस, छत्तीस, छप्पन आदि संख्याओं का प्रयोग प्रचुरता से होता है।[25]

लोकगीतों में वस्तुओं, सम्बन्धियों, आभूषणों, मिठाइयों आदि की दीर्घ परिगणना प्राप्त होती है। जब तरह–तरह की वस्तुओं का किसी गीत में समावेश होता है। तो उस गीत का क्षेत्रीय परिचय प्राप्त करना सरल हो जाता है। जिस क्षेत्र का गीत होता है वहां की प्रख्यात वस्तुओं का समावेश उसमें होता है।

लोकगीतों में कविता की तरह अलंकार की योजना नहीं रहती है। वहां सीधे–सादे भावों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती है। उत्कृष्टता तथा निकृष्टता के भेद–भाव से अलग वहां हर एक वर–वधू राम–सीता बनते हैं। हर माता–पिता कौशल्या और दशरथ हो जाते हैं। लोकगीतों में हृदय की अनुभूति सीधे शब्दों में व्यक्त होती है, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षादि अलंकारों के प्रयास जन्म आवरण में नहीं होते हैं।

निष्कर्ष

लोकगीतों की अलिखित परम्परा भारतीय समाज में लम्बे समय से विद्यमान रही। आज लोकगीतों के अध्ययन को सम्मान मिल रहा है, ग्रन्थ छप रहे हैं, शोध हो रहे हैं, पाठ्क्रम में सम्मिलित किया जा रहा है, परीक्षाओं में पूछा जा रहा है और इतना ही नहीं आज प्रत्येक व्यक्ति लोकगीतों की शक्ति को पहचान चुका है। भारतीय लोकगीतों की परम्परा अक्षुण्ण और लोकोपकारी है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *पं0 राम नरेश त्रिपाठी –कविता कौमुदी (परिवद्धित संस्कारण) तीसरा भाग (ग्रामगीत) पृ0–78*

2. अग्नि.....शोचितम् । ऋग्वेद 8/71/ 14
3. इन्द्रमिद गाथिनों बृहदिद्रर्केभिरत्रिण,
4. स मुनरितिहास .....कुर्वीतेति ।
5. तदेषाडभि.....श्लोकमाह । ऐतरेय ब्राह्मण 396
6. मंत्रायिणी संहित । 362 ऐतरेय ब्राह्मण 397
7. अथगाथा.....
स्त्रीणानुतम यज्ञ–पा0 गृ0 कांड? खंहिका 6
8. तौ चेता.....चत्रकासौ ।–आ0 गृ0 स0 7115
9. कदाचिदौयांनिक.....सती । श्री मद् भागवत
10. बोधिसत्तो.....नदति गदमोति
11. जगुफल.....खात्यतत् ।बाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड
12. विलास समसृणोल्ल सम्मुसत.....हि0 सा0 का बृहत् इतिहास भाग 97 पृ0 20 से उद्धृत
13. प्रतिहदृथे.....स्वन ।। नैषधीय चरित, सर्ग 2, श्लोक
14. नैन विसाल.....गावई हो ।। रामलला नहछू
15. करहिं सुमंगल.....सुर भाइन्ह ।। पार्वती मंगल
16. ये कई कोस .....भर कर । 'ग्राम्या पन्त'
17. "Rapidity of movement …….true ballad"
18. The character…….dame. C. Sampson, combrdge History of English Literature Page 106
19. पं0 राम नरेश त्रिपाठी, कविता कोमुदी ग्राम गीत, 1955, पृ0–60
20. It lives only……oradelerature frank sidgvirck. The Balled, Page- 39
21. ……There are the ardinaly ……..test . F.B. Gummare old English Balled Page 39
22. धोड़े चढु दुलहातु धोड़ चढु यहि रन वन में ....क0 कौ0, पृ0–83
23. पनवा छेवड़ि.....ह, रे जी । लो0 गी0 सा0 या0 पृ0 188 ।
24. कौन रंग मुंगवा.....रंगना?
25. अग्नि भोडिष्वावसे.....शोचितम् । ऋग्वेद 8/71/14